अध्याय 46.
पर्याप्ति

1. पर्याप्ति किसे कहते हैं एवं उसके कितने भेद हैं ?

(अ) परिसमन्तात् आप्ति-पर्याप्तिः शक्तिनिष्पत्तिरित्यर्थः(जै. सि. को., 3/40)। चारों तरफ से प्राप्ति को पर्याप्ति कहते हैं, अर्थात् शक्ति का प्राप्त करना पर्याप्ति है।

(ब) जन्म के प्रथम समय से पुद्गल परमाणुओं को ग्रहण कर जीवन धारण में विशेष प्रकार की पौद्गलिक शक्ति की प्राप्ति को पर्याप्ति कहते हैं। पर्याप्ति के छः भेद हैं-

1. **आहार पर्याप्ति** - एक शरीर को छोड़कर नवीन शरीर के साधनभूत जिन नोकर्म वर्गणाओं को जीव ग्रहण करता है। उन वर्गणाओं के परमाणुओं को ठोस (Solid) और तरल (Liquid) रूप में परिणमन (परिवर्तन) के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को आहार पर्याप्ति कहते हैं।
2. **शरीर पर्याप्ति** - जिन परमाणुओं को ठोस रूप परिवर्तित किया था, उसको हड्डी आदि कठिन अवयव रूप और जिनको तरल रूप परिवर्तित किया था, उनको रुधिरादि रूप में परिवर्तित करने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को शरीर पर्याप्ति कहते हैं।
3. **इन्द्रिय पर्याप्ति** - आहार वर्गणा के परमाणुओं को इन्द्रिय आकार रूप परिवर्तित करने को तथा इन्द्रिय द्वारा विषय ग्रहण करने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को इन्द्रिय पर्याप्ति कहते हैं।
4. **श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति** - आहार वर्गणा के परमाणुओं को श्वासोच्छ्वास रूप परिवर्तित करने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति कहते हैं।
5. **भाषा पर्याप्ति** - भाषा वर्गणा के परमाणुओं को वचन रूप परिवर्तित करने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को भाषा पर्याप्ति कहते हैं।
6. **मनःपर्याप्ति** - मनोवर्गणा के परमाणुओं को हृदयस्थान में अष्टपाखुडी के कमलाकार मनरूप परिवर्तित करने को तथा उसके द्वारा यथावत् विचार करने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को मनःपर्याप्ति कहते हैं।

इन सब पर्याप्तियों में प्रत्येक का काल अन्तर्मुहूर्त है और सबका मिलाकर काल भी अन्तर्मुहूर्त ही है। (मूलाचार, 1047 की टीका)

2. पर्याप्तक, निर्वृत्यपर्याप्तक और लब्ध्यपर्याप्तक किसे कहते हैं ?

पर्याप्तक - पर्याप्त नामकर्म के उदय से युक्त जिन जीवों की सभी पर्याप्ति पूर्ण हो जाती हैं, उसे पर्याप्तक जीव कहते हैं।

विशेष - किन्हीं आचार्यों ने सभी पर्याप्ति पूर्ण होने पर पर्याप्तक कहा है। किन्हीं आचार्यों ने शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने पर पर्याप्तक कहा है।

निर्वृत्यपर्याप्तक - पर्याप्त नामकर्म के उदय से युक्त जिन जीवों की पर्याप्तियाँ प्रारम्भ हो गई हैं एवं नियम से पूर्ण होंगी एवं जब तक शरीर पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती है तब तक उन्हें निर्वृत्यपर्याप्तक जीव

कहते हैं। (जी.का., 121)

लब्ध्यपर्याप्तक - अपर्याप्त नामकर्म के उदय से युक्त जीव, जिसने पर्याप्तियाँ प्रारम्भ की हैं, किन्तु एक भी पर्याप्ति पूर्ण नहीं करता और मरण हो जाता है, उसे लब्ध्यपर्याप्तक जीव कहते हैं।

(जी.का., 122) इनकी आयु श्वास के 18 वें भाग मात्र होती है। (जी.का., 125 की टीका)

3. लब्ध्यपर्याप्तक जीव एक अन्तर्मुहूर्त में अधिक से अधिक कितने भव धारण कर सकता है ?

एक लब्ध्यपर्याप्तक जीव यदि निरन्तर जन्म-मरण करे तो एक अन्तर्मुहूर्त में अधिक-से-अधिक 66, 336 बार जन्म और उतने ही बार मरण कर सकता है। इन भवों में प्रत्येक भव का काल क्षुद्रभव प्रमाण अर्थात् एक श्वास (नाड़ी धड़कन)का अठारहवाँ भाग है, अतः 66,336 भवों के श्वासों का प्रमाण $3685^{1}/_{3}$ होता है। इतने काल में

पृथ्वीकायिक बादर	6012 भव
पृथ्वीकायिक सूक्ष्म	6012 भव
जलकायिक बादर	6012 भव
जलकायिक सूक्ष्म	6012 भव
अग्निकायिक बादर	6012 भव
अग्निकायिक सूक्ष्म	6012 भव
वायुकायिक बादर	6012 भव
वायुकायिक सूक्ष्म	6012 भव
साधारण वनस्पति बादर	6012 भव
साधारण वनस्पति सूक्ष्म	6012 भव
प्रत्येक वनस्पति	6012 भव
एकेन्द्रिय के कुल	66,132 भव
द्वीन्द्रिय	80 भव
त्रीन्द्रिय	60 भव
चतुरिन्द्रिय	40 भव
असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च	8 भव
संज्ञी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च	8 भव
मनुष्य	8 भव
	66,336 भव (जी.का., 123-25)

सब मिलकर एक अन्तर्मुहूर्त काल में उत्कृष्ट 66,336 भव होते हैं।

4. लब्ध्यपर्याप्तक, निर्वृत्यपर्याप्तक और पर्याप्त अवस्था किन-किन गुणस्थानों में होती है ?

लब्ध्यपर्याप्तक अवस्था मात्र मिथ्यात्व गुणस्थान में होती है वह भी सम्मूर्च्छन जन्म से उत्पन्न होने वाले मनुष्यगति और तिर्यञ्चगति के जीवों के होती है, अन्य जीवों के नहीं होती है।

निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था मिथ्यात्व, सासादन सम्यक्त्व, अविरत सम्यक्त्व, प्रमत्तविरत (आहारक शरीर की

अपेक्षा) और सयोगकेवली (समुद्घात केवली की अपेक्षा) के होती है। पर्याप्त अवस्था सभी गुणस्थानों में होती है।

5. कौन से गुणस्थान में एवं कौन से जीव में कितनी पर्याप्तियाँ होती हैं ?

सभी गुणस्थानों में 6 पर्याप्तियाँ होती हैं किन्तु एकेन्द्रिय में भाषा और मन के बिना 4 पर्याप्तियाँ होती हैं। द्वीन्द्रिय से असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय तक मन के बिना 5 पर्याप्ति होती हैं। संज्ञी पञ्चेन्द्रिय में 6 पर्याप्तियाँ होती है एवं कार्माण काययोग में एक भी पर्याप्ति नहीं होती है। (मूलाचार, 1048-49)

6. अनेक स्थानों में अपर्याप्त अवस्था का कथन आता है, वहाँ लब्धि अपर्याप्त या निर्वृत्ति-अपर्याप्त कौन-सा लेना है ?

प्रसंग के अनुसार ही अर्थ लिया जाता है। देव, नारकी, आहारक मिश्र काययोग, कपाट समुद्घात में अपर्याप्त का अर्थ निर्वृत्ति-अपर्याप्त है एवं प्रथम गुणस्थान के मनुष्य, तिर्यञ्चों में, दोनों में से, एक जीव में एक रहेगा, किन्तु द्वितीय, चतुर्थ गुणस्थान में अपर्याप्त का अर्थ निर्वृत्त-अपर्याप्त ही है। तथा कार्मण काययोग में पर्याप्ति का अभाव होने से सामान्य रूप से अपर्याप्त लिया जाता है।

अभ्यास

सही या गलत बताइए -

1. भाषा वर्गणा के परमाणुओं को श्वासोच्छ्वास रूप परिवर्तित करने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को भाषा पर्याप्ति कहते हैं।
2. छठवें गुणस्थान में निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था भी बनती है।
3. प्रत्येक वनस्पति सूक्ष्म लब्ध्यपर्याप्तक के 6012 भव होते हैं।
4. स्थावर कायिक लब्ध्यपर्याप्तक के 66312 भव होते हैं।
5. एक पर्याप्ति पूर्ण होने में अन्तर्मुहूर्त लगता है।
6. असंज्ञी जीवों में 6 पर्याप्तियाँ भी होती हैं।

अन्यत्र खोजिए -

1. कौन सी गति से आने वाले जीव शीघ्र पर्याप्तियाँ पूर्ण कर लेते हैं ?
2. कार्माण काययोग में जीव अनाहारक होता है, वहाँ एक भी पर्याप्ति नहीं होती है किन्तु अयोग केवली गुणस्थान में भी जीव अनाहारक होता है तो वहाँ सभी पर्याप्तियाँ क्यों होती हैं ?

❑